अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी एवं सामाजिक विज्ञान शोध पत्रिका
Peer Reviewed Refereed शोध पत्रिका
ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12-Issue 01, (January-March 2024)

प्रेमचन्द के उपन्यासों में स्वराज के प्रति जागरूकता

पूनम यादव
शोधार्थी-हिन्दी साहित्य, लॉर्ड्स विश्वविद्यालय, अलवर
शोध निर्देशक-डॉ. प्रदीप कुमार

स्वतंत्रता प्राप्ति उस समय देश की प्रमुख माँग थी। स्वतंत्रता का अपना अलग-अलग स्वरूप था। नगरों में स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए जो आन्दोलन चल रहे थे, उसका मूल उद्देश्य विदेशी शासन से मुक्ति प्राप्त करना था। देहातों की स्थिति इसके विपरीत थी। यहाँ दोहरी शासन-व्यवस्था थी। एक शासन विदेशी सरकार था और दूसरा उन शासकों का था, जो सरकार की सत्ता बनाये रखने में उसके प्रबल समर्थक और हितैषी थे। इन शोषकों में जमींदार, कारिन्दे, सरकारी अधिकारी और महाजन थे। देहातों में विदेशी सरकार के प्रभुत्व से मुक्त होने के साथ-साथ इन शोषकों की बढ़ती फैलती शक्ति से भी बचना था। स्वतंत्रता प्राप्ति का प्रमुख साधन स्वराज्य स्वीकार किया गया। यह गांधी जी तथा उनके समर्थकों की प्रबल पुकार थी। प्रेमचन्द का लक्ष्य था कि धीरे-धीरे उत्पादन के साधनों पर समाज का अधिकार हो जाय। स्वराज्य राष्ट्रीयता वाला अर्थ उन्होंने ग्रहण न किया था। आवश्यकता इसी बात की न थी कि अंग्रेजों को निकाल बाहर किया जाय, वरन् इस बात की भी उनके साथ समाज की व्यवस्था में भी परिवर्तन हो जाय।

जागरण के सम्पादकीय में प्रेमचन्द ने लिखा था-"अधिकांश भारतीय स्वराज्य इसलिए नहीं चाहते कि अपने देश के शासन में उनकी आवाज ही पहले सुनी जाय, पर स्वराज्य का अर्थ उनके लिए आर्थिक स्वराज्य होता है। अपने प्राकृतिक साधनों पर अधिकार, अपनी प्राकृतिक उपजों पर नियंत्रण, अपनी वस्तुओं का स्वच्छ उपयोग और अपनी पैदावार पर अपनी इच्छानुसार मूल्य लेने का स्वत्व-यही उनकी सबसे बड़ी, सबसे उत्कट माँग है। यह मांग स्वराज्य का अंग नहीं, स्वराज्य इस माँग का अंग है।.....स्वराज्य का अर्थ केवल आर्थिक स्वराज्य है। आज भारत का उद्योग-धन्धा पनप उठे, आज भारत के घर-घर में खाने के लिए दो मुट्ठी अन्न और पहनने के लिए दो गज कपड़ा हो जाये अथवा परिश्रम के स्थान पर थोड़ा विश्राम हो। जीवन में कुछ कविता, कुछ स्फूर्ति, कुछ सुख मालूम पड़े तो कौन कल इस बात की चिन्ता करेगा कि भारत की पार्लियामेण्ट में अंग्रेज हैं या हिन्दुस्तानी। जो भी शासक हो, शासन का फल चाहिए।"[1]

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12-Issue 01, (January-March 2024)

प्रेमचन्द के लिए स्वराज्य का अर्थ अपेक्षाकृत व्यापक था। वे विदेशी सत्ता से ही नहीं, भारतीय शोषकों की बढ़ती प्रभुत्व-शक्ति से भी मुक्ति चाहते थे। उनकी दृष्टि में विदेशी शासन से स्वतंत्रता-प्राप्ति इतना अधिक महत्व नहीं रखती थी, जितनी अपने शोषकों से। विदेशी वस्त्र-विक्रेताओं तथा शराब की दुकानों पर धरना देने वालों का स्वागत डण्डों तथ न्यायालयों से किया जाता था। इस पर भी स्वयंसेवक अपने कर्तव्य पर अटल रहते थे और इस आन्दोलन तथा इसके उद्देश्य पर प्रकाश डालते रहते थे। मुहर तोड़कर सामान बेचने वाले दुकानदारों को वे तरह-तरह से लज्जित करते थे, जिससे दुकानदार पुनः वैसा कदम न उठायें। ऐसा करने वालों पर पुलिस के डण्डे भी बरसाये जाते थे।

प्रेमचन्द के ये विचार स्वराज्य-भावना की प्रतिध्वनि ही थे। गांधी जी ने ग्रामीण अंचलों में भी स्वराज्य की भावना के प्रचार का मार्ग समझा और वहाँ भी सत्याग्रहियों के जत्थे के जत्थे जाकर स्वराज्य की चर्चा करने लगे। "गाँवों में सत्याग्रहियों का आगमन एक उत्सव की भाँति चहल-पहल पैदा कर देता था। व्यापक रूप में स्वराज्य चित्त की वृत्ति मात्र है। ज्यों ही पराधीनता का आतंक दिल से निकल गया, स्वराज्य मिल गया। भय ही पराधीनता है, निर्भयता ही स्वराज्य है।"[2] प्रेमचन्द ने देखा कि भारतीय जनता को स्वराज्य प्राप्त होने पर ही उसकी दयनीय स्थिति सुधर सकेगी। जनता के लिए स्वराज्य सबसे बड़ा आकर्षण था, क्योंकि इससे देश विदेशी सत्ता से मुक्त हो जायेगा। देश की शासन व्यवस्था अपने लोगों के हाथ में आ जायगी। इस मधुर कल्पना के साथ यह शंका भी उठ खड़ी हुई कि क्या नये सत्ताधारी शोषण की स्वाभाविक प्रवृत्ति को त्याग सकेंगे? यदि नहीं, तब वास्तविक स्वराज्य नहीं मिल सकेगा।

''प्रेमचन्दयुगीन प्रमुख राष्ट्रीय आन्दोलनों में सन् 1921 का असहयोग आन्दोलन और सन् 1930 का नमक बनाओ आन्दोलन प्रमुख थे। इस समय तक प्रेमचन्द प्रेमाश्रम उपन्यास लिख चुके थे। उन्होंने आन्दोलन की तीव्रता को महसूस किया था। उन्होंने यह भी अनुभव किया कि राजनीतिक दासता ने अनेक आर्थिक एवं सामाजिक प्रश्न उत्पन्न कर दिये हैं।"[3] सन् 1921 में प्रेमचन्द ने 'स्वराज्य के फायदे' नामक लेख में स्वराज्य-प्राप्ति के प्रमुख साधनों का उल्लेख करते हुए लिखा था-स्वराज्य का मुख्य साधन स्वावलम्बन है अर्थात् सब जरूरतों को अपने आप पूरा कर लेना। स्वराज्य-प्राप्ति का दूसरा साधन उन व्यवस्थाओं का त्याग करना है जो हमारी आत्मा को दबाती हैं और उसे पराधीन, परावलम्बी बनाती हैं। अदालतें, सरकारी नौकरियाँ, सरकारी शिक्षा आदि हमारी आत्मा को कुचलने वाली, हमारे मन की पवित्र भावनाओं का दमन करने वाली, हमें कौड़ी का गुलाम बनाने वाली, हमारी वासनाओं को भड़काने वाली संस्थाएँ हैं।"[4]

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12-Issue 01, (January-March 2024)

स्वराज्य हेतु अनेक आन्दोलन किये गये। स्वराज्य-आन्दोलन के प्रमुख अंग थे-सभायें, सत्याग्रह, जुलूस, हड़ताल और स्वदेशी वस्त्र-प्रचार। प्रेमचन्द ने इन सभी पर सविस्तार लिखा है। कर्मभूमि उपन्यास में वे कहते हैं-"किसान भी सभाओं का आयोजन करते हैं। स्वराज के लिए वे एकत्रित होते हैं। उनकी भी समझ में आने लगा कि हमारी मेहनत का पूरा मुवाजा हमें स्वराज में ही मिल सकता है। पूरे साल मेहनत करने के बाद भी हमें मुट्ठी भर अनाज मिलता है और कारिंदा सारा भर ले जाता है। यह अन्याय बिना स्वराज के समाप्त नहीं होगा।"[5] स्वराज्य के लिए सत्याग्रह होते और सत्याग्रहियों को गिरफ्तार कर जेल में बन्द कर दिया जाता। लोगों में यह भावना आ गई थी कि स्वराज्य का मन्दिर जेल में है। जेल भक्ति और सम्मान की वस्तु बन गई थी। सत्याग्रही अपना विरोध दिखाने के लिए जुलूस निकालते और नारे लगाते। पुलिस डण्डों और गोलियों से इसका प्रत्युत्तर देती।

अब तक ग्रामीण अंचलों और नगरों में जो आन्दोलन चलाये गये, उनका नेतृत्व महात्मा गांधी के समर्थक ही कर रहे थे। यही कारण है कि इस विरोध में अहिंसात्मक साधनों का ही उपयोग रहा था। कायाकल्प का चक्रधर, कर्मभूमि का सलीम और रंगभूमि का सूरदास इसी प्रकार के गांधीवादी नेता के रूप में ही सामने आते हैं। ये सभी व्यक्तिगत बलिदान से लोगों के विद्रोह को शान्त करना चाहते हैं। इनमें सूरदास का चरित्र विशेष उल्लेखनीय है। "जो अहिंसा के पथ पर चल कर सरकारी कर्मचारियों का हृदय परिवर्तित करना चाहता है, सरकार के पास मारने का बल है तो उसके पास मर जाने का बल तो है ही।"[6] प्रेमाश्रम, कर्मभूमि और कायाकल्प में भी जनता और सरकार के बीच सीधा संघर्ष होता है। 'प्रेमाश्रम' में प्रेमशंकर किसानों की दशा सुधारने के लिए हाजीगंज में कृषि प्रयोगशाला खोलता है। लखनपुर गाँव के किसानों को वह जमींदार और सरकारी पदाधिकारियों के अत्याचार और अन्याय से बचाने के लिए पूरा प्रयास करता है। उसी प्रभाव से कुछ बिगड़े किसानों तथा सरकारी कर्मचारियों का सुधार भी होता है। "कायाकल्प का चक्रधर जगदीशपुर रियासत में सेवा-समिति का संगठन करके निम्नवर्ग का सुधार करना चाहता है। वह मजदूरों तथा चमारों के विद्रोह को शान्त करता है। जेल में कैदियों से दरोगा की रक्षा करता है।"[7] गांधीवादी मार्ग पर चलकर वह अहिंसा को स्वीकार करता है। बाद में उसका राजनीतिक जीवन सही मार्ग पर नहीं चल पाता। 'कर्मभूमि' उपन्यास में अमर, सुखदा तथा डॉ. शान्तिकुमार सभी गांधीवादी जीवन-दर्शन से प्रेरित हैं। प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों में गांधी जी के विचारों से प्रभावित अनेक पात्रों का निर्माण किया, किन्तु रंगभूमि का सूरदास अपने आप में अद्‌वितीय है। उसके संदर्भ में रामदीन गुप्त लिखते हैं-"सूरदास गांधी जी का ही प्रतिरूप है, कहना चाहिए उनका लघु साहित्यिक संस्करण है। वह गांधी जी के विचारों

ISSN: 2348–2605 Impact Factor: 7.789 Volume 12-Issue 01, (January-March 2024)

और उनके अहिंसात्मक सत्याग्रह का सजीव प्रतिनिधि है।"[8] **प्रेमचन्द अपने उपन्यासों में स्वराज की लहर अनेक जगह चलाते हैं। लोगों में स्वराज के प्रति जागरूकता पैदा करते हैं। उन्हें स्वराज के लाभ को बताते हैं और उसके प्रति सचेत करते हैं। जब लोग इसके प्रति चेतेंगे तो वे इसे प्राप्त करने का परिश्रम भी करेंगे। इसलिए उसके महत्त्व को बताना जरूरी है। प्रेमचन्द वही कार्य अपने उपन्यास के पात्रों, घटनाओं द्वारा करते हैं।**

सन्दर्भ

1 **जागरण, संपादक-कमल किषोर, पृ.-**5, 17 **अप्रैल** 1933

2 **पंचारिया, श्रीनिवास, उपन्यास सम्राट प्रेमचंद, पृ.-**56 **मैसूर प्रचार हिन्दी परिशद् पत्रिका, नवम्बर-**2007

3 **राय, विनोद, हिन्दी उपन्यास और प्रेमचन्द, पृ.-**187 **देव प्रकाशन, दिल्ली-**2005

4 **विविध प्रसंग, भाग** 2, **पृ.-**273

5 **प्रेमचन्द, कर्मभूमि, पृ.-**286

6 **प्रेमचन्द, रंगभूमि, पृ.-**319

7 **शर्मा, आर.के, हिन्दी उपन्यास और प्रेमचन्द, पृ.-**105 **राज प्रकाशन, आगरा-**2008

8 **गुप्त, श्रीरामदीन, प्रेमचन्द और गाँधीवाद, पृ.-**191